

मसूर की समग्र शिफारिशें अपनाएं और उत्पादन बढ़ाएं



आशा¹, दीक्षा¹, प्रगति यादव³,
एवं संदीप डागर²

¹मृदाविज्ञान विभाग,

²सब्जी विज्ञान विभाग,

³शस्य विज्ञान विभाग,

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि

विश्वविद्यालय, हिसार,

हरियाणा-125004

बाजार में मसूर की बढ़ती मांग को देखते हुए इसकी औसत पैदावार बढ़ाना नितांत आवश्यक है। प्रति इकाई मसूर की उपज बढ़ाने के लिए निम्न वैज्ञानिक तकनीक का अनुशरण करना चाहिए। दलहनी वर्ग में मसूर सबसे प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण फसल है। प्रचलित दालों में सर्वाधिक पौष्टिक होने के साथ-साथ इस दाल को खाने से पेट के विकार समाप्त हो जाते हैं यानि सेहत के लिए फायदे मंद है। मसूर के 100 ग्राम दाने में औसत 25 ग्राम प्रोटीन, 1.3 ग्राम वसा, 60.8 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 3.2 ग्राम रेशा, 68 मिग्रा. कैल्शियम, 7 मिग्रा. लोहा, 0.21 मिग्रा राइबोफ्लोविन, 0.51 मिग्रा. थाइमिन तथा 4.8 मिग्रा. नियासिन पाया जाता है अर्थात मानव जीवन के लिए आवश्यक बहुत से खनिज लवण और विटामिन्स से यह परिपूर्ण दाल है। रोगियों के लिए मसूर की दाल अत्यन्त लाभप्रद मानी जाती है क्योंकि यह अत्यंत पाचक है।

जलवायु

मसूर शरद ऋतु की फसल है जिसकी खेती रबी में की जाती है। पौधों की वृद्धि के लिए ठण्डी जलवायु परन्तु फसल पकने के समय उच्च ताप क्रम की आवश्यकता होती है। मसूर की फसल वृद्धि के लिए 20 से 30 डिग्री सेंटी ग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। जहाँ 80 - 100 सेमी. तक वार्षिक वर्षा होती है, मसूर की खेती बिना सिंचाई के भी बारानी परिस्थिति (वर्षा नमी संरक्षित) में की जाती है। अधिक वर्षा, अधिक गर्मी तथा पाला - कोहरा प्रभावित क्षेत्रों में मसूर की खेती नहीं की जाती है। गर्म आद्र स्थानों में इसकी उपज अच्छी नहीं आती है।

कैसी हो भूमि

मसूर की खेती के लिए हलकी दोमट तथा दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त रहती है। उत्तरी भारत में मैदानों की अलूवियल मिट्टी, मध्य प्रदेश में कपास की

काली मिट्टी तथा दक्षिण भारत की लाल लेटेराइट मिट्टी में मसूर की खेती अच्छी प्रकार से की जा रही है। छत्तीसगढ़ की डोरसा तथा कन्हार भूमि में मसूर की खेती की जाती है। अच्छी फसल के लिए मिट्टी का पी. एच. मान 5.8 - 7.5 के बीच होना चाहिये।

खेत की तैयारी

खरीफ फसल काटने के बाद 2 - 3 आड़ी - खड़ी जुताइयाँ देशी हल या कल्टीवेटर से की जाती है जिससे मिट्टी भुर भुरी एवं नरम हो जाए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चला कर मिट्टी बारीक और समतल कर लेते हैं। भारी मटियार मिट्टी में हल की दोमट की अपेक्षा अधिक जुताइयाँ करनी पड़ती है।

उन्नत किस्मों का चयन

देशी किस्मों की अपेक्षा उन्नत किस्मों के प्रमाणित बीज का उपयोग करने से अन्य फसलों की तरह मसूर से भी अधिकतम उपज (20 से 25 प्रतिशत अधिक) ली जा

सकती है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों के लिए मसूर की नवीनतम अनुमोदित किस्में निम्नानुसार हैं-

उत्तर पश्चिम मैदानी क्षेत्र: एल एल-147, पन्त एल-406, पन्त एल-639, सपना (एल एच 84-8), एल-4076 (शिवालिक), पन्त एल-4, प्रिया (डी पी एल-15), पन्त लेंटिल-5, पूसा वैभव, डी पी एल-62

उत्तर पूर्व मैदानी क्षेत्र : डब्लू बी एल-58, पन्त एल-406, डी पी एल-63, पन्त एल-639, मलिका (के-75), के ल एस-218, एच यू एल-67

मध्य क्षेत्र : जे एल एस-1, सी होर 74-3, मलिका (के-75), एल-4076, जवाहर लेंटिल-3, नूरी, पन्त एल-639, आई पी एल -81

कितना बीज

अधिक उपज के लिए खेत में पर्याप्त पौध संख्या होना आवश्यक है। इसके लिए प्रमाणित किस्म का स्वस्थ बीज संस्तुत मात्रा

में प्रयोग करना अनिवार्य है। बीज की मात्रा जलवायु, बुआई की विधि, बीज की अंकुरण क्षमता तथा किस्म पर निर्भर करती है। समय पर मसूर की बुआई हेतु उन्नत किस्मों का 30 - 35 कि. ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। विलम्ब से बुआई करने पर 40 किलो ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर से बोना चाहिए। मिश्रित फसल में प्रायः बीज दर आधी-आधी रखी जाती है।

बिजाई से पहले करें बीजोपचार

स्वस्थ बीजों को बुवाई के पूर्व थाइरम या बाविस्टिन 3 ग्राम प्रति किलो की दर से उपचारित करें। इसके उपरान्त बीजों को मसूर के राइजोबियम कल्चर तथा स्फुर घोलक जीवाणु (पी एस बी) कल्चर प्रत्येक को 5 ग्राम (कुल 10 ग्राम) प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में सुखा कर बोआई सुबह या शाम को करना चाहिए।

जरूरी है समय पर बुवाई

मसूर की बुआई रबी में अक्टूबर से दिसम्बर तक होती है। परन्तु अधिक उपज के लिए मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर का समय उपयुक्त है। ज्यादा विलम्ब से बोआई करने पर कीट व्याधि का प्रकोप अधिक होता है। देर से बोने पर यदि भूमि में नमी कम हो तो हल्की सिंचाई करने के पश्चात् बीज बोना चाहिए।

बुवाई वैज्ञानिक तरीके से

अच्छी उपज के लिए केरा या पोरा विधि से कतार बोनी करना ही उत्तम पाया गया है। हलके पीछे कूँड़ में बीज डालने के बाद खेत में पाटा चलाया जाता है। इस क्रिया से खेत समतल होने के अलावा बीज भी ढंक जाते हैं। पोरा विधि में देशी हल के पीछे

पोरा (चोंगा) लगाकर बोनी कतार में की जाती है। इसके लिए सीड ड्रिल का भी प्रयोग किया जाने लगा है। पोरा अथवा सीड ड्रिल से बीज उचित गहराई और समान दूरी पर गिरते हैं। अगेती फसल की बोआई पंक्तियों में 30 से. मी. की दूरी पर करना चाहिए। पछेती फसल की बोआई हेतु पंक्तियों की दूरी 20 - 25 से. मी. रखते हैं। मसूर का बीज अपेक्षा कृता छोटा होने के कारण इसकी उथली (3-4 से मी.) बुआई श्रेयष्कर होती है। आज कल शुन्य जुताई तकनीक से भी (जीरो टिल सीड ड्रिल से) मसूर की बुआई की जा रही है जिसमें खर्च कम आता है तथा समय की वचत भी होती है।

फसल को मिले संतुलित पोषण

दलहनी फसल होने के कारण मसूर को पिछली फसल में दी गई खाद के अवशेषों पर उगाया जाता है परन्तु अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए मृदा परीक्षण के पश्चात् संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना आवश्यक है। सिंचित अवस्था में 20 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फॉस्फोरस, 20 किग्रा. पोटाश तथा 20 किग्रा. सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से बीज बुवाई करते समय डालना चाहिए। असिंचित दशा में क्रमशः 15:30:10:10 किग्रा. नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश व सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के समय कूड़ में देना लाभप्रद रहता है। फास्फोरस को सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में देने से प्रायः आवश्यक सल्फर तत्व की पूर्ति भी हो जाती है। जिक की कमी वाली भूमियों में जिक सल्फेट 25 किग्रा./हे. की दर से अन्य उर्वरकों के साथ दिया जा सकता है। उर्वरकों को बोआई के समय कतारों में बीज लगभग 5

सेमी. की दूरी पर तथा बीज की सतह से 3 - 4 सेमी. की गहराई पर देना अच्छा रहता है।

सिंचाई कितनी और कब

मसूर में सूखा सहन करने की क्षमता होती है। सामान्य तौर पर सिंचाई नहीं की जाती है। फिर भी सिंचित क्षेत्रों में 1 - 2 सिंचाई करने से उपज में वृद्धि होती है। पहली सिंचाई शाखा निकलते समय अर्थात् बुवाई के 30 - 35 दिन बाद तथा दूसरी सिंचाई फलियों में दाना भरते समय बुवाई के 70 - 75 दिन बाद करना चाहिए। ध्यान रखें कि पानी अधिक न होने पावे। यथा संभव स्प्रिकलर से सिंचाई करें या खेत में स्ट्रिप बनाकर हल्की सिंचाई करना लाभकारी रहता है। अधिक सिंचाईयों मसूर की फसल के लिए लाभकारी नहीं रहती हैं। खेत में जल निकास का उत्तम प्रबन्ध होना आवश्यक रहता है।

खरपतवार नियंत्रण

मसूर की फसल में खरपतवारों द्वारा अधिक हानि होती है। यदि समय पर खरपतवार नियंत्रण पर ध्यान नहीं दिया गया तो उपज में 30 से 35 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। अतः मसूर बुआई से 45 - 60 दिन तक खेत खरपतवार मुक्त रहना आवश्यक है। बुवाई के 25 - 30 दिन एक निराई - गुड़ाई करने से उपज में वृद्धि होती है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के तुरंत बाद परन्तु अंकुरण से पहले पेन्डीमेथालिन 30 ई.सी. का 1.5 किग्रा सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 600 - 700 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें या फिर फ्लूक्लोरालिन 45 % ईसी 1.0 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 600 - 700 लीटर पानी

में घोल कर बुआई से पहले खेत में सतही मिट्टी में अच्छी तरह मिला ने के उपरांत मसूर की बोआई करें। इन शाकनाशियों के प्रयोग से चौड़ी व संकरी पत्ती वाले खरपतवार नियंत्रण में रहते हैं।

फसल पद्धति

मसूर की खेती खरीफ की फसलें (धान, ज्वार, बाजरा, मक्का, कपास आदि) लेने के बाद की जाती है। मसूर की मिश्रित खेती जैसे सरसों + मसूर, जौ + मसूर का भी प्रचलन है। शरद कालीन गन्ने की दो कतारों के बीच मसूर की दो कतारों (1.2) बोई जाती है। इसमें मसूर को 30 सेमी. की दूरी पर बोया जाता है।

कटाई एवं मड़ाई

मसूर की फसल 110 - 140 दिन में पक जाती है। अतः बोने के समय के अनुसार मसूर की फसल की कटाई प्रायः फरवरी-मार्च में जाती है। जब 70 -80 प्रतिशत फलियाँ भूरे रंग की हो जाएं और पौधे पीले पड़ने लगे पक जायें तो फसल की कटाई करना चाहिए। कटाई हँसिये द्वारा सावधानी पूर्वक करना चाहिए जिससे फलियाँ चटकने न पायें। काटने के बाद फसल को एक सप्ताह तक खलिहान में सुखाते हैं। इसके पश्चात् चलाकर थ्रेशर द्वारा दाने अलग कर हवा में साफ कर लिये जाते हैं।

उपज एवं भंडारण

मसूर की उपज बोई गई किस्म, बोने का समय और मिट्टी में नमी की उपलब्धता पर निर्भर करती है। मौसम अनुकूल होने पर तथा उपरोक्त नवीन उत्पादन तकनीक का अनुशरण करने पर मसूर दानों की उपज 20 - 25 किंटल तथा भूसे की उपज 30 - 35 किंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त

होती है। भण्डारण करने से पहले दानो को अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। दानों में 9 - 11 प्रतिशत नमी रहने तक सुखाने के बाद उचित स्थान पर इनका भण्डारण करना चाहिए।

मसूर की प्रमुख उन्नत किस्मों की विशेषताएं

नरेन्द्र मसूर-1 (एन एफ एल-92): यह किस्म 120 से 130 दिन में तैयार हो कर 15-20 किंटल उपज देती है। रस्ट रोग प्रतिरोधी तथा उकठा रोग सहनशील किस्म है। पूसा - 1: यह किस्म जल्दी पकने (100 - 110 दिन) वाली है। इसकी औसत उपज 18 - 20 किंटल प्रति हेक्टेयर है। 100 दानो का वजन 2.0 ग्राम है। यह जाति सम्पूर्ण मध्यप्रदेश के लिए उपयुक्त है। पन्त एल-406: यह किस्म लगभग 150 दिन में तैयार होती है जिसकी उपज क्षमता 30-32 किंटल प्रति हेक्टर है। रस्ट रोग प्रतिरोधी किस्म उत्तर, पूर्व एवं पश्चिम के मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त पाई गई है।

टाइप - 36: यह किस्म 130 - 140 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। औसत उपज 20 से 22 किंटल प्रति हेक्टेयर होती है। इसके 100 दानो का वजन 1.7 ग्राम है। यह किस्म केवल सतपुड़ा क्षेत्र को छोड़कर सम्पूर्ण मध्यप्रदेश के लिए उपयुक्त है।

बी. 77: यह किस्म 115 - 120 दिन में पक कर तैयार हो जाती है एवं औसत उपज 18 - 20 किंटल प्रति हेक्टेयर आती है। इसके 100 दानों का वजन 2.5 ग्राम है। यह किस्म सतपुड़ा क्षेत्र (सिवनी, मण्डला एवं बैतुल) के लिए उपयुक्त है।

एल. 9-12: यह किस्म देर से पकने (135 - 140 दिन) वाली है। इसकी औसत उपज 18 - 20 किंटल प्रति हेक्टेयर है। 100 दानों का वजन 1.7 ग्राम है। यह किस्म ग्वालियर, मुरैना तथा भिंड क्षेत्र के लिये उपयुक्त है।

जे. एल. एस.-1: यह बड़े दानो वाली जाति है तथा 120 दिनमें पक कर तैयार हो जाती है। औसतन उपज 20 - 22 किंटल प्रति हेक्टेयर होती है। इसके 100 दानों का वजन 3.1 ग्राम है। यह किस्म सीहोर, विदिशा, सागर, दमोह एवं रायसेन जिले तथा सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ के लिए उपयुक्त है।

जे. एल. एस.-2: यह किस्म 100 दिन में पक कर तैयार होती है एवं औसतन उपज 20 - 22 किंटल प्रति हेक्टेयर होती है। इसका दाना बहुत बड़ा है। 100 दानों का वजन 3.1 ग्राम है। यह म. प्र. के सीहोर, विदिशा, सागर, दमोह एवं रायसेन जिलों तथा सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ के लिए उपयुक्त है।

नूरी (आई पी एल-81): यह अर्द्ध फैलने वाली तथा शीघ्र पकने (110 - 120 दिन) वाली किस्म है। इसकी औसत उपज 12 - 15 किंटल प्रति हेक्टेयर है। 100 दानों का वजन 2.7 ग्राम है। यह किस्म छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र तथा सम्पूर्ण म. प्र. के लिए उपयुक्त है।

जे. एल. - 3: यह 100 - 110 दिनों में पक कर तैयार होने वाली किस्म है जो 12 - 15 किंटल औसत उत्पादन देती है। यह बड़े दानो वाली (2.7 ग्रा/100 बीज) एवं उकठा निरोधी जाति है। मध्य प्रदेश व छत्तीसगढ़ के लिए उपयुक्त है।

मलिका (के -75): यह 120 - 125 दिनों में पकने वाली उकठा निरोधी किस्म है। बीज गुलाबी रंग के बड़े आकार (100 बीजों का भार 2.6 ग्राम) के होते हैं। औसतन 12 - 15 किंटल/हे. तक पैदावार देती है। छत्तीसगढ़ के लिए उपयुक्त है।

सीहोर 74-3: मध्य क्षेत्रों के लिए उपयुक्त यह किस्म 120-125 दिन में तैयार होकर 10-15 किंटल उपज देती है। इसका दाना बड़ा होता है तथा 100 दानों का भार 2.8 ग्राम होता है।

सपना: यह किस्म 135-140 दिन में तैयार होती है तथा औसतन 21 किंटल उपज देती है। उत्तर पश्चिम क्षेत्रों के लिए उपयुक्त पाई गई है। दाने बड़े होते हैं। रस्ट रोग प्रतिरोधी किस्म है।

पन्त एल-234: यह किस्म 130-150 दिन में तैयार होती है तथा औसतन उपज क्षमता 15-20 किंटल प्रति हैक्टर है। उकठा व रस्ट रोग प्रतिरोधी पाई गई है।

बी आर-25: यह किस्म 125-130 दिन में पकती है जिसकी उपज क्षमता 15-20

किंटल प्रति हैक्टर होती है। बिहार व मध्य प्रदेश के लिए उपयुक्त पाई गई है।

पन्त एल-639: भारत के सभी मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त यह किस्म 130-140 दिन में पक कर तैयार होती है। इसकी उपज क्षमता 18-20 किंटल प्रति हैक्टर होती है। रस्ट व उकठा रोग प्रतिरोधी किस्म है जिसके दाने कम झड़ते हैं।



मसूर फसल का आर्थिक महत्व

दलहनी वर्ग में मसूर सबसे प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण फसल है। प्रचलित दालों में सर्वाधिक पौष्टिक होने के साथ-साथ इस दाल को खाने से पेट के विकार समाप्त हो जाते हैं यानि सेहत के लिए फायदे मंद है। मसूर के 100 ग्राम दाने में औसतन 25 ग्राम प्रोटीन, 1.3 ग्राम वसा, 60.8 ग्रा. कार्बोहाइड्रेट, 3.2

ग्रा. रेशा, 68 मिग्रा. कैल्शियम, 7 मिग्रा. लोहा, 0.21 मिग्रा राइबोफ्लोविन, 0.51 मिग्रा. थाइमिन तथा 4.8 मिग्रा. नियासिन पाया जाता है अर्थात मानव जीवन के लिए आवश्यक बहुत से खनिज लवण और विटामिन्स से यह परिपूर्ण दाल है। रोगियों के लिए मसूर की दाल अत्यन्त लाभप्रद मानी जाती है क्योंकि यह अत्यंत पाचक है। दाल के अलावा मसूर का उपयोग

विविध नमकीन और मिठाईयाँ बनाने में भी किया जाता है। इसका हरा व सूखा चारा जानवरों के लिए स्वादिष्ट व पौष्टिक होता है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ों में गाँठें पाई जाती हैं, जिनमें उपस्थित सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल की स्वतन्त्र नाइट्रोजन का स्थिरीकरण भूमि में करते हैं जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। अतः फसल चक्र में इसे शामिल करने से दूसरी फसलों के

पोषक तत्वों की भी कुछ प्रति पूर्ति करती है। इसके अलावा भूमि क्षरण को रोकने के लिए मसूर को आवरण फसल के रूप में भी उगाया जाता है। मसूर की खेती कम वर्षा और विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है।

मसूर मध्य एवं उत्तर भारत के बारानी (वर्षा आश्रित) क्षेत्रों में आसानी से उगाई जा सकती है। मध्य प्रदेश में लगभग 0.53

मिलियन हेक्टर क्षेत्र में मसूर की खेती प्रचलित है जिससे 505 किग्रा. प्रति हेक्टर औसत उपज के अनुमान से 0.27 मिलियन टन उत्पादन लिया जा रहा है। छत्तीसगढ़ में मसूर करीब 23.24 हजार हेक्टेयर में उगाई जा रही है। इसकी औसत उपज 414 किग्रा. प्रति हेक्टर है जोकि राष्ट्रीय औसत से काफी कम है।

मसूर की उपज कम होने के प्रमुख कारण है-

1. चयन की गई किस्मों का क्षेत्र विशेष के अनुकूल ना होना
2. उन्नत किस्मों का गुणवत्त युक्त बीज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध ना होना
3. मसूर की फसल में उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग करना
4. समयानुसार सिंचाई, खरपतवार, कीट रोग नियंत्रण पर ध्यान ना देना

